ज्ञान तत्व अंक 156

(क) राजनीति के भ्रष्ट होने पर प्रश्न और मेरा उत्तर ।
(ख) आर्थिक असमानता के विरूद्ध होने तथा आन्दोलन की भूमिका से दूर रहने के संबंध में प्रश्न और मेरा उत्तर ।
(ग) सर्वोदय और संघ के संबंध में प्रश्न और मेरा उत्तर ।
(घ) मो0 शफी आजाद बाराबंकी, उत्तर प्रदेश, का प्रश्न और मेरा उत्तर ।
(च) श्री रामकृष्ण जी पौराणिक, एम0ए0 एल0एल0बी0, सागर म0प्र0। का प्रश्न और मेरा उत्तर ।
(छ) श्री बाबूलाल शर्मा जी, बांदा, उत्तर प्रदेश। का प्रश्न और मेरा उत्तर ।
(ज) डा0 गोपीरंजन साक्षी, सागर, मध्यप्रदेश। का प्रश्न और मेरा उत्तर ।
(झ)ईश्वर दयाल, मुजफ्फरपुर, राजगीर (नालन्दा)बिहार का प्रश्न और मेरा उत्तर ।

कार्यालयीन प्रश्नों के उत्तर

(क) प्रश्न– क्या आप जानते है कि राजनीति में सभी भ्रष्ट हैं? यदि हो भी तो ऐसा कहना उचित है क्या?

उत्तर – उन्नीस बीस अप्रैल को गोविन्दाचार्य जी ने वृन्दावन में एक विशेष बैठक की थी जिसमें देशभर के करीब चार सौ लोग मौजूद थे। राजीव दीक्षित जी ने एक प्रस्ताव रखा जिसमें राजनैतिक भ्रष्टाचार का उल्लेख था। यू0पी0 के पूर्व सांसद वीरेन्द्र सिंह जी ने यह कहकर आपत्ति की कि प्रस्ताव से सभी राजनेताओं पर शंका प्रकट होती है जो ठीक नहीं है। उनके भाषण के बीच में ही राजस्थान के महेश जाखड़ ने कहा कि प्रस्ताव ठीक है और उन्होंने एक नारा सुनाया'' अब तो यह स्पष्ट है, नेता सारे भ्रष्ट है''। जब वीरेन्द्र सिंह ने कुछ कहना चाहा तो श्रोताओं ने बलपूर्वक उन्हें रोक दिया। वीरेन्द्र सिंह बिल्कुल अलग–थलग पड़ गये और ऐसा लगा जैसे पूरी सभा ही उनके विरूद्ध हो गई है। इसके बाद भी राजीव दीक्षित जी ने प्रस्ताव की भाषा संशोधित कर दी, क्योंकि एक राजनेता दूसरे राजनेता के कष्ट को बखूबी समझता है, किन्तु जनभावना तो स्पष्ट होती ही है।

मेरा स्वयं का व्यक्तिगत अनुभव भी यही है कि राजनीति में ईमानदार लोगों का प्रतिशत लगभग शून्य है। मेरा राजनीति से या राजनीति में गहरा और दूर तक का अनुभव भी है और जानकारी भी। निन्यान्नवे प्रतिशत लोग तो अपना घर भरने की सीमा तक भ्रष्ट हैं और एक दो प्रतिशत लोग अपने लिए तो ईमानदार हैं, किन्तु पार्टी के लिए सब प्रकार का भ्रष्टाचार करते रहते हैं। जिस देश के पूर्व प्रधानमंत्री नरसिम्हाराव जी और वर्तमान प्रतीक्षारत प्रधानमंत्री लालकृष्ण आडवाणी बड़ी मुश्किल से न्यायालय से भ्रष्टाचार के आरोप से मुक्त हुए हों और आज तक जनमानस साफ न हो वहॉ राजनीति में भ्रष्टाचार की मात्रा पर चर्चा ही व्यर्थ है।

भारत के साम्यवादियों में ईमानदारी की बहुत चर्चा होती है। सच भी है कि भारत का एक भी साम्यवादी सांसद न करोड़पतियो की सूची में शामिल है न सांसद रिश्वतकाण्ड में। साम्यवादियों में व्यक्तिगत भ्रष्टाचार की मात्रा नगण्य ही है। यह इनके सांगठनिक ढांचे का परिणाम है जो किसी भी और दल के पास नहीं है, किन्तु राजनैतिक अत्याचार के रूप में साम्यवादियों का कोई मुकाबला ही नहीं है। इनके शासन में दल और प्रशासन के बीच का अन्तर ही समाप्त हो जाता है। पूरे बंगाल में लगभग तानाशाही का वातावरण है। नन्दीग्राम में विपक्ष की महिलाओं से बलात्कार तक किये गये । लूटपाट और मारपीट तो हुई ही किन्तु किसी साम्यवादी को शर्म नहीं आई । पूरे बंगाल में बिना पार्टी की अनुमति के कोई व्यापार भी संभव नहीं है। यदि यह भ्रष्टाचार नहीं है तो भ्रष्टाचार की नई परिभाषा अब सोमनाथ जी से पूछनी चाहिए।

राजनेताओं ने सम्पूर्ण व्यापारी वर्ग को भी भ्रष्ट घोषित कर दिया है और कर्मचारी वर्ग को भी। जब कि कर्मचारियों या व्यापारियों में कुछ लोग ईमानदार भी मिल जाया करते हैं। एक बात और है कि कर्मचारी या व्यापारी वर्ग का भ्रष्टाचार सरकारी कानूनों का उल्लंघन है न कि सामाजिक विश्वास का उल्लंघन। दूसरी ओर राजनैतिक भ्रष्टाचार पूरी तरह सामाजिक विश्वास का उल्लंघन है। दोनों में जमीन–आसमान का फर्क है। इसलिए सम्पूर्ण राजनीति भ्रष्टाचार की पर्याय बन चुकी है। यह एक सम्पूर्ण सत्य है। अब तो राजनीति में सोलह प्रतिशत तक अपराधी शामिल हो चुके हैं और इनकी संख्या लगातार बढ़ रही है यह आरोप भी सत्य होता जा रहा है । यह अलग बात है कि अन्य दलों के अपराधी व्यक्तिगत लाभ–हानि के लिए अपराध करते हैं तो साम्यवादी दलीय लाभ हानि के लिए। राजनीति के चरित्र की समीक्षा के लिए राजस्थान के साथी का नारा बिल्कुल उपयुक्त है। हमारे जो साथी राजनीति में रहते हुए भी अब तक ईमानदार हैं उन्हें अब राजनीति से बाहर आकर किसी नई राजनीतिक व्यवस्था के प्रयत्न और प्रतीक्षा करनी चाहिए।

प्रश्न (ख) आप आर्थिक असमानता के विरूद्ध रहे हैं। इस विषय में आपके विचार अधिक स्पष्ट हैं, किन्तु आप इस संबंध में किसी संघर्ष या आन्दोलन की भूमिका से दूर रहते हैं। क्यों? यदि आप भी जुड़ जावें तो आर्थिक मुद्दों पर ध्रुवीकरण तीव्र हो सकता है।

उत्तर— सत्ता और धन एक दूसरे के पूरक हैं, किन्तु सत्ता की गति धन कमाने में धन की अपेक्षा कई गुना अधिक तीव्र होती है। यही कारण है कि आज धन के बदले सत्ता छोड़ने वाले कम और सत्ता के बदले धन खर्च करने वाले ज्यादा मिलते हैं।

असमानता दो प्रकार की है। **(1)**स्वतंत्रता में असमानता **(2)**सम्पत्ति में असमानता। आज आर्थिक असमानता की तो खूब विवेचना होती है, किन्तु असमान स्वतंत्रता की

चर्चा कभी होती ही नहीं। प्रत्येक राजनेता आर्थिक –असमानता की चर्चा तो खूब करता है, किन्तु राजनैतिक असमानता के विषय में बिल्कुल चुप रहता है। कोई राजनेता प्रत्येक व्यक्ति को तीन रूपये किलो अनाज का दावा करता है तो कोई दूसरा प्रत्येक व्यक्ति को जमीन या टी0बी0 देने की घोषण करता है। कोई शिक्षा और रोजगार का लालच देता है तो कोई जमीन। कोई–कोई तो प्रत्येक मतदाता को साढ़े सत्रह सौ रूपया प्रतिमाह तक दिलाने का वचन दे रहा है। एक भी ऐसा घोषणा पत्र नहीं है जिसमें आर्थिक असमानता को दूर करने का वादा न हो, किन्तु राजनैतिक सत्ता की असमानता दूर करने का कहीं कोई वादा नहीं है। मैं प्रतिदिन अखबारों के लेख देखता हूॅ। हर दिन किसी न किसी विद्वान का आर्थिक असमानता पर चिन्ता व्यक्त करता हुआ लेख मिल जाता है। सबमें यह प्रश्न उठाया जाता है कि आर्थिक सीमा बननी ही चाहिए। धन की अधिकतम सीमा और न्यूनतम सीमा में कितना तक अन्तर हो यह तय होना आवश्यक है। मस्तराम जी कपूर हों या अजय तिवारी, सब घुमा–फिराकर आर्थिक विषयों की विवेचना तक सीमित रहते हैं।

मैं जब ऐसे लेख पढ़ता हूॅ और ऐसे विद्वानों द्वारा राजनैतिक सत्ता की बढ़ती असमानता के बारे में चुप्पी पर सोचता हूॅ तो लगता है कि ऐसी आवाज उठाने वाले या तो गुलाम मानसिकता को अपनी नियति मान बैठे हैं या स्वयं इस सीमा तक राजनैतिक दौड़ में शामिल हैं कि आर्थिक असमानता की चर्चा को वे राजनैतिक दौड़ जीतने का माध्यम मानते हैं। मैं ऐसे संघर्ष से बाहर हूॅ, क्योंकि न तो मैं किसी राजनैतिक सत्ता की दौड़ में शामिल हूॅ न ही अन्तिम रूप से राजनैतिक गुलामी में जीने का आदी बन चुका हूॅ।

आर्थिक विषमता की रोज–रोज चर्चा करने वाले इस बात का उत्तर क्यों नहीं देते कि राजनैतिक विषमता की सीमा रेखा क्यों नहीं हो? भारत में राजनैतिक व्यवस्था को सामाजिक –पारिवारिक व्यवस्था में कटौती करने के असीमित अधिकार क्यों उचित हैं? राजनैतिक व्यवस्था हमारे वेतन भत्तें तो तय कर सके, किन्तु उनके अपने वेतन भत्ते वे जब चाहे तब स्वयं तय कर लें। यह कैसा लोकतंत्र है? ऐसे असीमित अधिकार प्राप्त करने की राजनैतिक इच्छा रखने वाले यदि समाज के कमजोर वर्ग की तरफ अधिक से अधिक सुविधाओं का चारा फेंकते है तो मैं ऐसे संघर्ष में साथ नहीं। मैं ऐसे संघर्ष का तभी समर्थन सहयोग कर सकता हूॅ जब ऐसे किसी आन्दोलन के मूल में राजनैतिक विषमता दूर करने का वादा हो और साथ में आर्थिक विषमता दूर करने की योजना। दुर्भाग्य से अभी ऐसा संघर्ष शुरू होने की सुगबुगाहट मात्र है। आगे और पता चलेगा तब स्थिति स्पष्ट होगी।

प्रश्न (ग)आपने स्पष्ट किया है कि आपकी नजर में सर्वोदय या उससे जुड़े लोग संघ वालों से अधिक अच्छे हैं। आप स्वयं भी सर्वोदय को अच्छा मानते हैं, किन्तु व्यावहारिक तौर पर देखने में आता है कि आप सर्वोदय वालों के कार्यक्रमों से दूरी बना कर रखते हैं। अभी–अभी बीस मई को सर्व सेवा संघ ने परमाणु बम योजना के विरूद्ध

जन्तर–मन्तर पर दो दिवसीय धरना प्रदर्शन किया। आप आधे घण्टे बाद ही लौट गये। आपका ऐसा व्यवहार क्यों है?

उत्तर — मेरे कहने का आशय वह नहीं जैसा आप कह रहे हैं। त्याग और तपस्या करने वाले संघ में सर्वोदय की अपेक्षा अधिक हैं, किन्तु संघ एक संगठन है और सर्वोदय संस्था। सर्वोदय के विचार संकीर्ण नहीं जबकि संघ के हैं। सर्वोदय ''बसुधैव कुटुम्बकम्'' की दिशा में है और संघ हिन्दू राष्ट्र की दिशा में। सर्वोदय अपनी संस्था की प्रगति के लिए दूसरों की सम्पत्ति पर ललचाई नजर नहीं रखता जबकि संघ की नजर बराबर लगी रहती है। सर्वोदय कभी राजनीति की दिशा में नहीं सोचता, किन्तु संघ बराबर उसी दिशा में सोचता है। सर्वोदय के लोग शरीफ होते हैं, कर्तव्य प्रधान होते हैं, संचालित प्रवृत्ति के होते हैं, जबकि संघ के लोग अपने संगठन के बाहर वालों के लिए बहुत चालाक होते हैं, अधिकार प्रधान होते हैं, संचालक होते हैं।

कुल मिलाकर संघ के लोगों का दोहरा आचरण होता है **(1)**अपनों के लिए अलग **(2)**दूसरों के लिए अलग। सर्वोदय में ऐसा नहीं है, क्योंकि सर्वोदय में व्यक्तिगत स्वतंत्रता संघ की अपेक्षा कई गुना अधिक है। इसलिए इन्हें दुहरा आचरण रखने की आवश्यकता नहीं होती है। दूसरी बात यह भी है कि संघ कार्यकर्ताओं को बाकायदा प्रशिक्षण देकर उनको एक दिशा में मोटीवेट किया जाता है, जबकि सर्वोदय में ऐसी कोई व्यवस्था नहीं है।

सर्वोदय का जो गुण है वही उसका दुर्गुण भी है। सर्वोदय के समक्ष कोई स्पष्ट दिशा नहीं है, जबकि संघ के पास येन–केन–प्रकारेण सत्ता प्राप्त करना एक दिशा के रूप में स्पष्ट है। दूसरी सबसे बड़ी कमजोरी यह है कि सर्वोदय के लोग आसानी से ठगे जाते हैं। उनकी यह कमजोरी संध भी जानता है और वामपंथी भी। वामपंथ इस संबंध में संघ की अपेक्षा अधिक संगठित और सुनियोजित योजना अनुसार काम करता है इसलिए वामपंथ सर्वोदय को ठगने में अधिक आसानी से सफल हो जाता है जबकि संघ ऐसा नहीं कर पाता। संघ के साथ गांधी हत्या जैसे कलंक भी लगातार जुड़ा है और संघ आज तक दिल से उसका प्रायश्चित नहीं करना चाहता। तीसरी बात यह भी है कि आपातकाल के समापन के बाद संघ फिर से अपने वास्तविक रूप में आ गया और सर्वोदय को धोखा हुआ। इसका लाभ भी वामपंथ लगातार उठाता रहता है। आज स्थिति यह हो गई है कि सर्वोदय पूरी तरह आतंकवादी वामपंथियों का भोपू बना हुआ है। वामपंथ की बिल्कुल साफ नीति है ''अमेरिका विरोध''। इसके लिए वे इस्लाम के साथ भी गठजोड़ कर सकते है और आतंकवाद के साथ भी। सर्वोदय के किसी भी कार्यक्रम में आप अमेरिका विरोध और इस्लाम समर्थन अवश्य पाएंगे। यहां तक कि वामपंथियों के बीच भी अति वामपंथ और नरम वामपंथ की बात उठती है तो सर्वोदय हमेशा उग्र वामपंथ के पक्ष में खड़ा होता है , नरम वामपंथ के पक्ष में नहीं।

बीस मई को मैं भी सर्वोदय के धरने में गया था। वहॉ जाकर मैंने देखा कि वह धरना भारत की परमाणु बम नीति के विरूद्ध न होकर भारत अमेरिका परमाणु समझौते के विरूद्ध केन्द्रित था। वामपंथियों ने सर्वोदय को आगे करके आन्दोलन की पहल कर दी । सर्वोदय तो उनका His Master' Voice था ही। सर्वोदय इस समझौते की आलोचना करे यह बात तो समझ में आती है, किन्तु संघर्ष के लिए जन्तर–मन्तर पर धरना दे यह बात मैं नहीं समझ सका। इनके धरने के ठीक सामने सिर्फ बीस फुट की दूरी पर जयपुर बम ब्लास्ट के विरूद्ध शान्तिप्रिय मुसलमानों ने आतंकवाद के विरूद्ध विरोध व्यक्त किया, किन्तु सर्वोदय के एक भी सदस्य को उसमें रूचि नहीं थी। मैंने पूछा भी तो बताया गया कि वह तो संघ समर्थित मुसलमानों का विरोध प्रदर्शन है। मैं उसके बाद लौट गया। प्रश्न उठता है कि सर्वोदय न कभी इस्लामिक आतंकवाद के विरूद्ध आवाज उठाता है न ही नक्सलवादी हिंसा के खिलाफ। उसे बंगाल की मार्क्सवादी हिंसा तब तक नहीं दिखती जब तक वह नक्सलवादियों के खिलाफ न हो । हाथ में गॉधी की अतिवादी अहिंसा का झण्डा और सड़क पर अतिवादी हिंसा के साथ गठजोड़। यह सर्वोदय का स्वभाव नहीं है, किन्तु वह तो ऑख मूँद कर किसी के पीछे चल रहा है। उसे दिखता ही नहीं कि क्या उचित है और क्या अनुचित है।

मुझे यह देखकर अवश्य खुशी हुई कि पूरी ताकत लगाने के बाद भी पूरे धरने और सभा को मिलाकर पचास–साठ पदाधिकारी ही बैठे थे। सब के सब राष्ट्रीय स्तर के पदाधिकारी थे। न कोई जनता थी न कार्यकर्ता। मुझे कुछ नये लोग दिखे और मैंने पूछा तो पता चला कि ये दूसरे संगठनों के इस विषय पर वक्ता बुलाए गए हैं। पन्द्रह दिनों की रथ यात्रा के बाद उसके समापन में कार्यकर्ताओं की अरूचि से संगठन को सतर्क हो जाना चाहिए।

मैं सर्वोदय और संघ के बीच का अन्तर समझता हूॅ। किन्तु सर्वोदय संघ विरोध के नाम पर इस्लामिक आतंकवाद और वामपंथी उग्रवाद से भी गठजोड़ करना शुरू कर दे तो हमें हिंसा और अहिंसा के बीच स्वतंत्र सोच बनाने के लिए मजबूर होना पड़ता है। यही कारण है कि मैंने मंच से वापस आना उचित समझा। मेरा यह स्पष्ट मत है कि सर्वोदय किसी अन्य विचारधारा का पिछलग्गू न बनकर स्वतंत्र सोच शुरू करे, गुण–दोष के आधार पर किसी का भी समर्थन या विरोध करने की अपनी स्वतंत्रता बनाये रखे और सड़क पर उतरने के पूर्व गम्भीरता से सोचे और तैयारी करे तो अधिक अच्छा होगा।

प्रश्नोत्तर

(घ)मो0 शफी आजाद बाराबंकी, उत्तर प्रदेश ।

आप द्वारा प्रेषित ज्ञानतत्व —152 प्राप्त हुआ धन्यवाद। डा0 साक्षी जी के तथा सोमानी जी के अपने अलग— अलग विचारों और उनके विचारों पर आपका संयुक्त उत्तर का अध्ययन किया। इस्लाम धर्म प्रवर्तक ने अपने को अन्तिम पैगम्बर घोषित किया या नहीं मैं नहीं कह सकता, लेकिन पूनर्विचार या विचार—मंथन का मार्ग बन्द कर देना किसी भी समाज या देशकाल के लिए शुभ साबित नहीं हो सकता। इस विषय पर मैं तथागत बुद्ध की तारीफ करता हूँ कि उन्होंने अपूर्व साहस का परिचय दिया। इस संबंध में वह अन्य धर्म प्रवर्तक व धर्मावलम्बियों से भिन्न है। काविले तारीफ पत्रिका प्रेषित करने के लिए पुनः धन्यवाद।

उत्तर —आप मुसलमान होते हुए तटस्थ और स्वतंत्र विचार मंथन में सहभागी बन रहे हैं यह खुशी की बात है। आपने जो बहस शुरू की है उसके काफी अच्छे परिणाम आ रहे हैं। ज्ञान यज्ञ परिवार इस मंथन से बहुत लाभान्वित हुआ है। बहुत मित्रों के इस संबंध में पत्र आए हैं। आप ऐसे ही अन्य विषयों पर भी दो टूक लिखने की आदत डालें।

(च) श्री रामकृष्ण जी पौराणिक, एम0ए0 एल0एल0बी0, सागर म0प्र0।

मैं बहुत वर्षों से आपके पत्र के माध्यम से आपसे जुड़ा हूँ। एक बार भोपाल में कुछ समय के लिए भेंट हो सकी थी। इस लम्बे अन्तराल के बाद जो स्थितियॉ बनी हैं , आपके बहुत प्रयास के बाद वे 'सारवान' तो प्रतीत होती हैं पर उसके व्यवहार में आने में आपको ही नहीं एक संगठित समाज को आन्दोलन करना पड़ेगा जिसमें मुख्य जिम्मेदारी नवयुवक तथा निर्माण और विचार प्रेरणा प्रखर समाज चिंतकों की हो। इसके अभाव में यह कर्मकाण्ड मात्र रह जायेगा।

क्योकि आपने जो दो प्रमुख समस्याएॅ संविधान में बिना विशेष परिवर्तन किए संविधान की कार्यपालिका शक्ति को नियंत्रित करने की सोची है वह विशेष प्रभावशील नहीं है''। रिकाल ''छोटे स्विटजरलैण्ड जैसे देश में चल सका है, क्योंकि वह देश वैसे ही समस्या विहीन, संसार भर के कालेधन का केन्द्र है। इसी मायाजाल के आधार पर देश फल —फूल रहा है। न विधि धर्म न विधि जाति। भौगोलिक सुरक्षा की समस्या भी नहीं है।

वास्तविक समस्या को गम्भीरता से समझें

1. इस देश की वास्तविक समस्या है जातिवादी दृष्टिकोण जो अब सामाजिक, अलगाववादी सुख वोट बैंक बनकर लेता है।

2. धार्मिक विविधता के साथ धार्मिक कट्टरता और अधिक असहिष्णुता तथा धर्म के मूल तत्वों से दूर रहकर सामाजिक घृणा का राजनीतिकरण करते हुए अलगाववादी उन्माद।
3. क्षेत्रीय भाषायी उन्माद पूर्ण अतिरेक जो पूर्वाचल, नागालैण्ड कश्मीर मेघालय ,असम, उड़ीसा, तमिलनाडु आदि में तेजी से फैलकर अपनी पृथकता की घोषणा कर उसे प्राप्त करने में शारीरिक, बौद्धिक, आर्थिक सशस्त्र कूटनीतिक पैंतरे वाला रहा है।
4. बेकारी ,गरीबी महंगी शिक्षा अनियंत्रित महंगाई, महंगी दवाएं ,भोजन, वस्त्र ये समाज को वैश्वीकरण द्वारा दो राष्ट्रीय समाज बन चुके हैं जो फिर भी परस्पर एक दूसरे से टकरा रहे हैं।
5. पाकिस्तान और चीन के षड़यंत्र इस समग्र अंर्तराष्ट्रीय वातावरण में दलगत राजनीति को ऐन–केन–प्रकारेण जब तब धन–बल का बाहुल्य और कुटनीतिक जोड़तोड़ व भ्रष्टाचार को मुक्तहस्त बढ़ावा देने में लिप्त है। संविधान की किसी एक या दो धाराओं के परिवर्तन से न शासन तंत्र किसी प्रकार भ्रष्टाचार मुक्त लोक नियंत्रित बनेगा और न किसी नैतिक आध्यात्मिक चेतना द्वारा एकजुट होगा।

अतः मेरा सुझाव है कि सभी निस्वार्थ समाजसेवी एवं विचारक लोग एकजुट होकर कई दिनों पहिले व्यक्ति फिर समूहशः इन गम्भीर समस्याओं पर विचार करें। गायत्री परिवार, सर्वसेवा संघ (सर्वोदय समाज) आर्यसमाज, राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ एवं धर्मो के भी ऐसे व्यक्ति जो धार्मिक स्वरूप या धार्मिक समरसता में उदारवादी, आध्यात्मिक मूल तत्व में विश्वास रखते हो विचार– विमर्श कर एक राष्ट्रीय एवं अंर्तराष्ट्रीय मानव कल्याण रूपी शोषण युक्त न्याय आधारित व्यवस्था के लिए सोचें। कर्मकाण्ड छोड़े।

उत्तर – आपने ''राइट टू रिकाल'' को इसलिए अव्यावहारिक बताया कि वह दुनिया के किसी बड़े देश में न लागू हुआ न सफल। मैं आपसे सहमत हूॅ। जिन पश्चिमी देशों के सामाजिक जीवन और राजनीतिक जीवन में अन्तर कम है और राजनीतिज्ञ भारत जैसे उच्छृंखल नहीं हुए है वहॉ 'राइट टू रिकाल' की न आवश्यकता है न उपयोगिता ।'राइट टू रिकाल'। तो एक प्रकार की लगाम है जो बिगड़ैल घोडे के समय मालिक को अवश्य हाथ में रखनी चाहिए। यदि दुनिया में 'राइट टू रिकाल' नहीं है इसलिए हम न लागू करें यह तर्क उचित नहीं। आप राइट टू रिकाल के गुण–दोष की समीक्षा भेजें।

आपने पॉच समस्याएॅ बताई। इनकी सूची और लम्बी है। जिन सबके पन्द्रह वर्षो के लगातार ज्ञान यज्ञ के बाद अलग–अलग समाधान खोजे जा चुके हैं। इन समाधानों को लागू करने के पूर्व दो सूत्री संविधान संशोधन आवश्यक है।

आपने निःस्वार्थ समाजसेवी विचारकों की टीम बनाकर आन्दोलन की बात कही। समस्या यह है कि ऐसी टीम कौन बनावे और टीम कैसे बने? इसके दो मार्ग है **(1)**टीम बनाई जाए **(2)**टीम बने। पहला प्रयत्न संभव नहीं दिखता, क्योंकि कौन समाजसेवी है कौन धूर्त इसकी पहचान नहीं हो पा रही है। दूसरा मार्ग बहुत लम्बा है । फिर भी दोनों दिशाओं में प्रयत्न जारी है। पहला प्रयत्न लोक स्वराज्य आन्दोलन के नाम से जारी है और दूसरा ज्ञान यज्ञ परिवार के नाम से।

मेरी भूमिका तो सुषेण वैघ तक की सीमित है। लक्ष्मण रूपी समाज मूर्छित है। दो प्रकार के इलाज संभव है। समाधान बिल्कुल स्पष्ट हैं परीक्षित हैं, निश्चित परिणाम देने वाले हैं, किन्तु वैद्य सुषेण दवा खोज कर लाने में सक्षम नहीं। यदि आप लोग मिलकर कुछ कर सकें तो अच्छा है, अन्यथा युवकों के नाम बला टालकर किनारे हो जाइए। मैं आप सब के साथ हूँ।

(छ) श्री बाबूलाल शर्मा जी, बांदा, उत्तर प्रदेश।

प्रश्न— राइट टू रिकाल का अधिकार तो उसे ही होता है जिसे राइट टू स्टार्ट का अधिकार प्राप्त हो। जब भारत के मतदाताओं को अपने मन पसन्द व्यक्ति चुनाव में खड़ा करने की स्थिति नहीं है तब वापस बुलाने का प्रश्न ही कहाॅ उठता है। कौन नहीं जानता कि आज खड़ा होने वाला उम्मीदवार आम मतदाताओं की पसंद न होकर या तो स्वयं की पसंद है या किसी एक दल की। अच्छा हो कि उम्मीदवार चयन की नई प्रणाली विकसित की जावे। यदि इस कार्य में आप भी लग सकें तो अच्छा होगा।

उत्तर — चुनाव में संवैधानिक रूप से दो स्थितियाॅ ही आदर्श होतीं है। **(1)**प्रत्येक व्यक्ति को चुने जाने का अधिकार हो। **(2)**प्रत्येक व्यक्ति को चुनने का अधिकार हो। इस आदर्श नीति के बीच में कोई रूकावट तब तक उचित नहीं जब तक कोई व्यावहारिक बाधा न हो। संविधान बनाने वालों ने सबसे पहले भूल की कि पागल या दिवालिया को चुनाव लड़ने से वंचित कर दिया। फिर अपराधी के नाम पर भी आरक्षण करके उसे और संकुचित किया गया। अभी—अभी छत्तीसगढ़ सरकार ने इस प्रक्रिया को और बढ़ाते हुए पंचायत चुनाव में न्यूनतम शिक्षा को भी जबरदस्ती ठूॅस दिया है। कल ही रघुवंश प्रसाद सिंह जी ने कहा कि खुले में शौंच जाने वाले को चुनाव लड़ने से रोक दिया जायेगा। दो से अधिक बच्चों की शर्त भी तो लगा ही दी गई है। आगे पता नहीं क्या—क्या होगा। मेरे विचार से आदर्श स्थिति में बिना व्यावहारिक कठिनाई के छेड़छाड़ उचित नहीं। मतदाताओं के अन्तिम निर्णय को स्वीकार करना चाहिए। मतदाताओं की योग्यता पर प्रश्नचिन्ह् खड़े करना अच्छी आदत नहीं।

आपका जो सुझाव है उसमें कानून कुछ नहीं कर सकता। आप किस प्रक्रिया से उम्मीद्वार चुनते है यह आपका आन्तरिक मामला है। आपने उम्मीद्वार चयन की जो

प्रक्रिया बताई है उस पर आप काम करें यह अच्छी बात है। मैं तो सिर्फ संवैधानिक सशक्तिकरण की बात कर रहा हूॅ। राइट टू स्टार्ट का अधिकार आज भी संवैधानिक रूप से मतदाताओं को है। राइट टू स्टाप भी उन्हें मिलना चाहिए यह हमारी मॉग है।

वैसे जय प्रकाश जी ने भी मतदाता परिषद् बनाकर प्रयोग किया था कि सर्वसम्मत उम्मीद्वार हो। मैं उस समय भी उसे एक सामाजिक प्रयास मानता था और आज भी मानता हूॅ। यह बिल्कुल भिन्न प्रयत्न है। इस प्रयत्न से समाज सुधार तो होगा, किन्तु राज्य का हस्तक्षेप कम नहीं होगा। मेरी सोच तो यह है कि सभी समस्याओं के समाधान का एक ही सूत्र है कि राज्य का समाज में हस्तक्षेप, अधिकार और दायित्व न्यूनतम हो। राइट टू रिकाल तो इस मॉग के साथ जुड़ी है। न भी जुड़े तो चल सकता है। जय प्रकाश जी ने बीमारी को बहुत ठीक से समझकर ही सहभागी लोकतंत्र या लोक स्वराज्य की बात उठाई थी। बाद मे वे कुछ न होते देखकर मतदाता परिषद् और भ्रष्टाचार नियंत्रण को जोड़ने लगे। अच्छे आदमी को चुनने की कोशिश मेरे विचार में वैसी ही सलाह है जैसी स्वतंत्रता संघर्ष के समय कोई गॉधी को स्वतंत्रता संघर्ष रोककर सतीप्रथा रोकने का कानून बनवाने में मदद करने को कहता। चुने हुए जन प्रतिनिधि को निलम्बित करने या बर्खास्त करने का अधिकार मतदाताओं को हो इसके स्थान पर ठीक से नियुक्ति का कर्तव्य आपने पता नहीं क्या समझ कर सुझाया है। किसी कर्मचारी को गल्ती करने पर दण्डित करने या बर्खास्त करने का अधिकार हटाकर उसकी नियुक्ति प्रक्रिया को और पारदर्शी बनाया जाए ऐसे बेमेल सुझावों का कोई अर्थ नहीं है।

(ज)डा0 गोपीरंजन साक्षी, सागर, मध्यप्रदेश।

ज्ञानतत्व 152 (पृ0–4) पर नेहरू–अम्बेडकर पर यह आरोप कि उन्होंने हिन्दू धर्म के साथ छेड़छाड़ की यह गलत है। उन्होंने हिन्दू समाज व्यवस्था में जो राष्ट्र के संदर्भ में या कहें कि मानवता के संदर्भ में बाधक रूढ़ियों में परिवर्तन करना चाहा था। हिन्दुओं के तीनों वर्णो में भेदभाव परम्पराऍ तथा तीनों मिलकर चतुर्थ वर्ण पर कहर ढ़ाते रहे यह संवैधानिक हस्तक्षेप से ही कुछ कमी आ पाई है। देश विभाजन के लिए महात्मा गॉधी भी कम जिम्मेवार नहीं है। यदि इस संदर्भ में उन्होंने भूख हड़ताल की होती तो देश विभाजन से बच जाता।

आज संविधान में जो मौलिक अधिकार बहाल किए हैं उसका ही परिणाम है कि वर्तमान संविधान में अनेक खामियॉ दिख रही है। शताब्दियों तक मनुस्मृति वादियों के सत्ता काल में विचार स्वातंत्रय रहा ही नहीं। आज बजरंग मुनि जी जिस विचार मंथन को आगे बढ़ा रहे है वह भगवान बुद्ध ने शताब्दियों पूर्व बहुजन हिताय बहुजन सुखाय से प्रारम्भ कर दिया था।

संविधान संशोधन की धारा ही डॉ0 अम्बेडकर की दूरगामी सोच का परिणाम है। पहली नजर में संविधान संशोधन जोखिम भरा कार्य अवश्य है। कारण देश –विदेश के दुश्चरित्र वणिक, स्थानीय गुण्डानुमा विद्वान ,राजनेता आदि जिनके कारण व्यवस्था चरमराई है, हस्तक्षेप कर सकते हैं। अतः दूषित को शुद्ध बनाना ही होगा।

पूजिए विप्र शील गुण हीना। शूद्र न गुण गण ज्ञान प्रवीणा। जैसे कथनों को प्रसंगगत कहकर मुॅह चुराने की कोशिश की जाती है जबकि जमीनी स्तर पर प्रभाव सर्वाधिक इन्हीं पंक्तियों का रहा है। नए संविधान से अपेक्षा है कि वह वर्ण श्रेष्ठता के नाटक को समूल नष्ट करें। श्री सोमानी जी को पूर्वाग्रह छोड़कर तथ्यों की सम्पूर्ण जानकारी का मंथन करना चाहिए और अपने अध्ययन को बढ़ाना चाहिए।

(झ)ईश्वर दयाल, मुजफ्फरपुर, राजगीर (नालन्दा)बिहार–803116

गोडसे संबंधी आपके विचारों में पूरा 'यूटर्नः देखने को मिला और आचार्य पंकज जी के कथन की पुनः पुष्टि हुई है। ''गोडसे का कृत्य न कभी प्रशंसनीय था न रहेगा। इसलिए गोडसे के कार्य में देशभक्ति देशप्रेम के प्रयत्न का कोई समावेश हो ही नहीं सकता '' (ज्ञान तत्व 154 , पृष्ठ 10)सही हो तो '' गोडसे के मन में निस्वार्थ देशभक्ति की भावना भरी हुई थी। गोडसे की भावना पर कभी कोई उंगली नहीं उठाई जा सकती '' ज्ञान तत्व 145 , पृष्ठ 16)का क्या औचित्य है? यद्यपि 'कार्य' और 'भावना' शब्दों को लेकर खूब शास्त्रीय कलाबाजी दिखाई जा सकती है, जो 'नार्यस्तु यत्र पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता' की 'भावना' व्यक्त कर महिलाओं का 'कार्य रूप में उत्पीड़न शोषण –दहन करने वाले हमारे दोहरे 'बगुला भगत चरित्र' के अनुरूप ही होगा। अतः मैं उस शास्त्रीय विवाद में न पड़कर यह जानना चाहूॅगा कि जब उसी महाराष्ट्र के 'चाफेकर बन्धु' आजादी के लिए फांसी पर लटक रहे थे, गोखले, तिलक काले पानी की सजा भुगत रहे थे तो 'निस्वार्थ देशभक्ति की भावना' से भरा गोडसे क्या केवल इसलिए बिल में छुपा बैठा था कि आजादी की लड़ाई जीतने के बाद गांधी की हत्या कर सके। वस्तुतः गोडसे का यह कृत्य भी उसी 'बगुला चरित्र' का परिचायक है जो 'गायकबाड़ 'सिन्धिया और '' बाबर–राणासांगा'' के इतिहास में परिलक्षित है। यदि आपके ही उदाहरण को उद्धृत करूॅ तो क्या अपने बेटे की बलि चढ़ा देने वाले पिता (ज्ञानतत्व –154) को इस तर्क के आधार पर आप पुरस्कृत करना चाहेंगे कि वह कृत्य उसने बेटे की भलाई की भावना से किया था? नहीं न। तब क्या गोडसे संबंधी आपके उक्त दोनों कथन एक दूसरे को मुॅह विराते–से प्रतीत नहीं होते।

यह कहना सही नहीं प्रतीत होता कि गोडसे मोटिवेटेड (प्रेरित)था। जो व्यक्ति गॉधी की हत्या की योजना बनाने उसके लिए सैनिकों (हत्यारों)का चयन करने संसाधन और विस्फोटक का जुगाड़ करने सैनिकों (हत्यारों)की यथा स्थान नियुक्ति करने, उन्हें ड्युटी बांटने के बाद स्वयं सुरक्षित सेनापति की भांति सारे घटनाक्रम पर गंभीर दृष्टि रख रहा हो उसे 'मोटीवेटेड'(प्रेरित), कैसे कहा जा सकता है? यह बात अलग है कि टीम के

सदस्यों की अक्षमता दायित्व हीनता और मूर्खता ने सेनापति को सुरक्षा कवच से बाहर निकलकर एक्शन के लिए बाध्य कर दिया। यह 'बाध्यता' और एक्शन ही यह प्रमाणित करने के लिए पर्याप्त है कि गोडसे मात्र मोटीवेटेड (प्रेरित) नहीं था। यदि होता तो अपने अन्य साथियों की तरह 'योजना ' से विरत हो जाता। आपने भी गोडसे के किसी 'मोटीवेटर'(प्रेरक)का नाम नहीं दिया है आप या कोई अन्य 'मोटीवेटर के रूप में जिस व्यक्ति या शक्ति का नाम संकेतिक करेंगे गोडसे के उग्र विचारों से उसका अन्तर्विरोध स्वतः से निरस्त कर देगा। इसके उल्ट सारे साक्ष्य इस ओर संकेत करते हैं कि स्वयं गोडसे गोपाल गोडसे, मदनलाला पहवा, आप्टे, करकरे, बडगे और न जाने कितने लोगों का 'मोटिवेटर' रहा है। इसी कारण न उसका तालमेल आर0एस0एस0 के अप्रतिहत फैलाव को सहसा रोक दिया, हिन्दू महासभा को सत्ता प्रतिष्ठान से सदा के लिए दूरकर दिया और सावरकर के पीछे गांधी हत्या का भूत लगा दिया जो अब भी उनका पीछा नहीं छोड़ रहा है, शायद छोड़ेगा भी नहीं। यदि वह गांधी के संसर्ग में आया होता तो अपने कृत्यों से उनकी छवि को भी आहत ही करता, महिमा मण्डन का तो प्रश्न ही नहीं है।

वैसे भी 'मोटीवेटर' (प्रेरक)और मोटीवेटेड'(प्रेरित) की विभाजक रेखा बड़ी पतली और आपेक्षिक होती है। जो गाधी सारे भारत और विश्व के लिए प्रेरक रहे हैं वे भी गोखले ,रायचन्द भाई और टालस्टाय से प्रेरित थे। जिन आचार्य विनोवा भावे को आपने मोटिवेटेड की सूची में रखा है, वे आज भी संसार के हजारों नर–नारियों के लिए मोटीवेटर बने हुए हैं। वस्तुतः मोटीवेटेड/मोटीवेटर का विभाजन बहस या वाद के लिए सैद्धांतिक रूप से तो स्वीकार किया जा सकता है किन्तु व्यवहार में अलग–अलग उनका अस्तित्व न के बराबर है। ऐसा व्यक्ति दुर्लभ है जो मोटीवेटर तो हो, किन्तु स्वयं किसी के द्वारा मोटीवेटेड न हो। उसका उलट भी उतना ही सत्य है। अतः इस वायवीय विभाजन को व्यावहारिक जगत में स्वीकार करना कठिन है।

जहॉ तक अपेक्षाकृत अच्छा प्रधानमंत्री होने या देश का भला करने की बात है (तदैव)तो यूटोपिया में जीने वाला व्यक्ति स्वयं अपना भला नहीं कर सकता, देश और लोक का भला तो बहुत बहुत बड़ी बात है।

उत्तर– मनु या अन्य अनेक महापुरूषों के महिलाओं और शूद्रों के विषय में कहे कुछ अवांछित विचारों का तो समाज पर व्यापक प्रभाव पड़ा, किन्तु अन्य ढ़ेर सारे अच्छे विचारों का प्रभाव नहीं पड़ा इस बात से मैं सहमत नहीं। कहीं ऐसा तो नहीं कि बौद्ध हो जाने के बाद हिन्दू धर्म की बुराईयां ही प्रचारित करने के पीछे तर्क कम और संकीर्णता अधिक हैं? मेरी इच्छा है कि सोमानी जी और साक्षी जी कुछ और अधिक व्यापक रूप से सोचकर व्यक्त करें।

किसी पिता ने अपने बेटे की बलि चढ़ा दी उसे पुरस्कृत करने का तो प्रश्न ही नहीं है । उसे तो दण्ड होगा ही, किन्तु किसी प्रेमिका के प्रेम में फंसकर हत्या करने और

भावनाओं से प्रभावित होकर बलि देने के बीच सामाजिक प्रताड़ना में अन्तर होना चाहिए। एक दया का पात्र है और एक धृणा का। गोडसे मोटीवेटर था या मोटीवेटेड इस संबंध में मेरे पास पहले दिये गये तर्को से कोई भिन्न तर्क नहीं है।

इस विषय पर बहुत व्यापक विचार मंथन ज्ञान तत्व के माध्यम से हो चुका है। यदि कुछ नये विचार आए तो हम मंथन करेंगे अन्यथा इस विषय को अब रोककर नये विषय पर चर्चा को विस्तार देना उचित होगा। आशा है कि आपका नये विषय पर भी ऐसा ही सहयोग मिलेगा।